डेकार्ट

बुद्धिवाद के जनक
आधुनिक युग के जनक

बुद्धिवाद का अर्थ → समस्त ज्ञान का स्रोत बुद्धि है।

डेकार्ट ने मध्य युग की धार्मिक प्रवृत्तियों के विरुद्ध आधुनिक युग का आरंभ बौद्धिक प्रवृत्ति से किया। विचारकों में बौद्धिक चेतना जाग्रत हुई।

ग्रंथ →

1. द डिस्कोर्स ऑन मैथड
2. द प्रिंसिपल ऑफ फिलोसोफ़ी
3. द मेडिटेशन
4. द पेशन ऑफ द सार

दार्शनिक पद्धति

संदेह पद्धति — कार्टीशियन प्रणाली
गणितीय पद्धति

डेकार्ट दर्शन के क्षेत्र में निष्पक्ष और तटस्थ भाव से अध्ययन करना चाहते थे। उन्होंने देखा कि दर्शन में कोई भी विचार ऐसा नहीं, जो पूर्ण रूप से निश्चित, सत्य और सार्वभौमिक हो, अर्थात जिसे सभी एकमत होकर मानते हों। अतः हमें निश्चित सत्य की खोज करनी चाहिए।

डेकार्ट गणितज्ञ थे तथा वे कहते

थे कि जिस प्रकार गणितीय ज्ञान निर्विवाद और निश्चित होता है उसी प्रकार की निश्चितता एवं सार्वभौमिकता दर्शन में भी होनी चाहिए। अर्थात दर्शन की नींव भी गणित के समान सुदृढ़ होनी चाहिए। अतः इनकी प्रणाली गणितीय प्रणाली कहलाती है।

डेकार्ट ने कहा कि हमारी संवेदनाएँ भी विश्वसनीय नहीं हैं, क्योंकि वे भी अनेक बार हमें मिथ्या ज्ञान दे देती हैं। इस प्रकार डेकार्ट प्रत्येक विषय में संदेह करते हैं। अतः उनकी पद्धति संदेह पद्धति कहलाती है।

- **आधुनिक प्रणाली के जनक** → डेकार्ट ने दर्शन के क्षेत्र में सर्वप्रथम वैज्ञानिक प्रणाली को जन्म दिया। डेकार्ट से पूर्व मध्य युग धार्मिक आस्था और अंधविश्वास का युग था। जनता की चिन्तन शक्ति स्वतंत्र नहीं थी। अतः डेकार्ट इस प्रणाली द्वारा निश्चित सत्य की खोज करना चाहते थे।

डेकार्ट की दार्शनिक पद्धति के नियम →

1. किसी भी विषय को तब तक सत्य नहीं मानना चाहिए जब तक उसकी परीक्षा न हो जाए, अर्थात प्रथम चरण में हर वस्तु में संदेह करना चाहिए।
2. किसी विषय की सत्यता की परीक्षा के लिए हमें उस विषय को कुछ अंशों में विभाजित कर देना चाहिए।

1. "मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ" यह अनुमान नहीं, अपितु वास्तविक एवं स्पष्ट अनुभूति है।

2. इसका अर्थ है कि आत्मा की सत्ता चिन्तन करने पर निर्भर है तथा चिंतन के अनेक रूप हैं जैसे - संदेह करना, इच्छा करना, संकल्प करना, कल्पना करना आदि।

3. शारीरिक क्रियाओं से आत्मा का अस्तित्व सिद्ध नहीं होता। जैसे - यह नहीं कहा जा सकता कि "मैं दौड़ता हूँ इसलिए मैं हूँ"। इससे आत्मा का नहीं, शरीर का अस्तित्व सिद्ध होता है।

4. ज्ञाता होने के कारण आत्मा स्वतः सिद्ध है अर्थात् ज्ञान आत्मा का स्वरूप गुण है।

5. "मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ" यह निश्चित सत्य डेकार्ट को सर्वप्रथम संदेह से प्राप्त हुआ था, और इसी के माध्यम से उन्होंने दर्शन में आगे अनेक सत्यों की खोज की।

डेकार्ट कहते हैं कि मैं स्वयं पर संदेह नहीं कर सकता, क्योंकि इस संदेह से भी मेरे ही अस्तित्व की सिद्धि होती है।

इस प्रकार "मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ" यह डेकार्ट के दर्शन का आधारभूत, प्रथम, निश्चित, स्पष्ट, निर्विवाद और स्वतः सिद्ध सत्य है।

द्वैतवाद - मनस् एवं शरीर

डेकार्ट संदेह से प्रारंभ करके निश्चित सत्य की खोज करते हैं। विचार करने से विचारक का अस्तित्व सिद्ध होता है। अतः उनका निष्कर्ष है कि मैं सोचता हूँ इसलिए मैं हूँ।

डेकार्ट कहते हैं कि संदेह एक विचार है तथा निराधार नहीं रह सकता, अतः इसके आधार के रूप में आत्मा को मानना ही होगा तथा आत्मा का निवास स्थान शरीर है। अतः डेकार्ट ने उक्त संदेहरहित निश्चित सत्य से आगे अनेक सत्यों की खोज की।

1. मनस् और शरीर दो तत्त्व हैं → डेकार्ट ने कहा कि जगत् में दो प्रकार की सत्ताएँ दिखाई देती हैं - चेतन व अचेतन। अतः चेतन सत्ता मनस् है जिसे आत्मा कहते हैं तथा अचेतन सत्ता शरीर या जड़तत्त्व है। इन दो तत्त्वों से जगत् की रचना होती है।

2. मनस् का लक्षण विचार है, शरीर का विस्तार → डेकार्ट कहते हैं कि आत्मा का गुण विचार है जबकि जड़तत्त्व या शरीर का गुण स्थान घेरना या विस्तार है। जो आत्मा है वह शरीर नहीं, दोनों नितांत विरोधी हैं पर एक दूसरे के पूरक हैं, दोनों की अपनी स्वतंत्र सत्ता है।

3. मनस् सक्रिय है, शरीर निष्क्रिय → डेकार्ट कहते हैं कि जड़ में चेतना और चेतन में जड़ता नहीं होती अर्थात् मन में विस्तार और शरीर में विचार नहीं होता। चेतन होने से मनस् सक्रिय है तथा अचेतन होने के कारण शरीर निष्क्रिय है।

4. मनस और शरीर में पारस्परिक संबंध की व्याख्या → क्योंकि मनस और शरीर में नितांत विरोधी गुण होते हैं, दोनों में पूर्णतया सामंजस्य दिखाई देता है अर्थात मन का प्रभाव शरीर पर तथा शरीर का प्रभाव मन पर पड़ता है। दैनिक जीवन में हम देखते हैं कि शरीर में कष्ट होने पर मन पीड़ित हो जाता है तथा मन में खुशी होने पर शरीर में भी स्फूर्ति रहती है।

5. क्रिया प्रतिक्रियावाद → डेकार्ट इस पारस्परिक संबंध की व्याख्या क्रिया-प्रतिक्रियावाद से करते हैं। वे कहते हैं मनुष्य के मस्तिष्क में पीनियल ग्रंथि में मनस और शरीर में अन्तर्क्रिया होती है जहाँ दोनों एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। इसके फलस्वरूप आत्मा को बाह्य जगत का ज्ञान होता है तथा दोनों एक दूसरे के अनुकूल व्यवहार करने लगते हैं। इसे अन्तर्क्रियावाद भी कहते हैं।

6. अन्तःप्रक्रिया का क्रम →

1. इंद्रियाँ बाह्य जगत से संवेदनाएँ ग्रहण करती हैं।
2. ये संवेदनाएँ पीनियल ग्रंथि तक पहुँचती हैं।
3. इनसे जैविक शक्ति उत्तेजित होती है।
4. पीनियल ग्रंथि से जैविक शक्ति विचरण करती हुई माँसपेशियों तक पहुँचती है तथा इसके अनुकूल शारीरिक व्यवहार होने लगता है।
5. इस प्रकार मानसिक विचारों के अनुकूल शारीरिक व्यवहार होता है।

7. दो विरोधी तत्वों का समन्वय → डेकार्ट को ऊपर देनवी

कहा जाता है। चेतन - अचेतन, मनस - शरीर, भौतिक - आध्यात्मिक - इनका विरोध ही द्वैतवाद का आधार है।

8. प्रतिनिधिवाद → डेकार्ट की ज्ञान-मीमांसा में भी द्वैत है। डेकार्ट के अनुसार हमें बाह्य वस्तुओं का ज्ञान प्रत्यक्ष नहीं अपितु अप्रत्यक्ष रूप से होता है।

9. विज्ञान और धर्म में भी द्वैत है → डेकार्ट के अनुसार धर्म का संबंध आध्यात्मिक चेतना से है जबकि विज्ञान का संबंध भौतिक जगत से है। ये दोनों पूर्णतया विरोधी हैं तथा स्वतंत्र हैं।

10. समानान्तरवाद → इस प्रकार डेकार्ट के दर्शन में द्वैतवाद बहुत बड़ी समस्या है जो आगे चलकर (स्पिनोज़ा) के समानान्तरवाद में बदल गया, जिसके अनुसार यह द्वैत कभी समाप्त नहीं हो सकता, हमेशा बना रहता है। ये दोनों विरोधी तत्त्व हमेशा साथ-साथ चलते हैं, एक दूसरे को प्रभावित भी करते हैं, पर कभी एक नहीं हो सकते।

आलोचना →

1. डेकार्ट ने द्रव्य का लक्षण स्वतंत्र व निरपेक्ष होना बताया है तथा इसीलिए ईश्वर को द्रव्य माना है तथा दूसरी ओर वे मनस और शरीर को भी द्रव्य मानते हैं और उन्हें ईश्वर पर आश्रित मानते हैं। इससे उनके दर्शन में विरोधाभास उत्पन्न होता है।

Page
Date

2. डेकार्ट ने मनस् और शरीर में संबंध के लिए पीनियल ग्रंथि को आधार माना है। आलोचना है कि मनस् अर्थात् आत्मा जैसी अभौतिक तथा आध्यात्मिक सत्ता पीनियल ग्रंथि जैसी भौतिक सत्ता में कैसे रह सकती है।

ईश्वर

डेकार्ट के अनुसार संदेह से विचार एवं विचारक आत्मा की सत्ता सिद्ध होती है, लेकिन क्योंकि मैं संदेह करता हूँ इसलिए मैं अपूर्ण हूँ। इस प्रकार मनुष्य सीमित है अतः उसके मस्तिष्क में एक असीमित सत्ता का विचार होना स्वाभाविक है और यही असीमित सत्ता ईश्वर है।

अब प्रश्न है कि असीमित ईश्वर का प्रत्यय मानव के मन में कैसे आया? डेकार्ट कहते हैं कि कुछ प्रत्यय जन्मजात होते हैं, जो बुद्धि में जन्म से होते हैं, ईश्वर का प्रत्यय ऐसा ही प्रत्यय है।

डेकार्ट के अनुसार प्रत्यय तीन प्रकार के होते हैं-

1. जन्मजात प्रत्यय → इन्हें नैसर्गिक प्रत्यय भी कहते हैं। ये बुद्धि में जन्म से विद्यमान होते हैं, इन्हें मनुष्य उत्पन्न नहीं करता। समय के साथ धीरे-धीरे हमें इनकी चेतना होती है। जैसे - ईश्वर का प्रत्यय।

2. काल्पनिक प्रत्यय → ये वे प्रत्यय हैं जिन्हें मनुष्य स्वयं बनाता है। ये पूर्णतः व्यक्तिगत होते

हैं तथा मनुष्य के विचारों पर निर्भर होते हैं।

3. आकस्मिक प्रत्यय → ये प्रत्यय बाह्य जगत में होते हैं तथा ये मनुष्य के विचारों पर निर्भर नहीं होते। इनकी चेतना हमें अनुभव से होती है। कभी-कभी ये मनुष्य के संकल्प के विरुद्ध भी होते हैं। जैसे - मनुष्य चाहे या न चाहे, अग्नि से जलन होती ही है।

डेकार्ट कहते हैं कि ईश्वर का प्रत्यय जन्मजात प्रत्यय है। मनुष्य में ईश्वर की धारणा जन्म से ही विद्यमान है। अतः हम जन्म से ही जानते हैं कि ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, नित्य, असीम, पूर्ण और दयालु है।

ईश्वर की सिद्धि के प्रमाण →

1. कार्य कारण मूलक प्रमाण → कार्य कारण नियम के अनुसार कोई भी घटना बिना कारण नहीं होती, अर्थात प्रत्येक कार्य का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। संपूर्ण विश्व इसी नियम से बँधा है। दूसरी ओर, कार्य की सत्ता कारण से अधिक नहीं हो सकती, अर्थात कार्य में कोई ऐसी शक्ति नहीं होती जिसका कारण में अभाव हो।

अब डेकार्ट कहते हैं हमारी बुद्धि में ईश्वर का विचार जन्म से ही विद्यमान है और ऐसे विचार का कारण स्वयं ईश्वर ही हो सकता है। अतः पूर्ण व अनन्त ईश्वर की सत्ता मानना तार्किक रूप से अनिवार्य है।

सत्ता मूलक प्रमाण → डेकार्ट कहते हैं कि पूर्ण ईश्वर का विचार ही उसके अस्तित्व का प्रमाण

है। डेकार्ट के अनुसार मानव अपूर्ण और सीमित है और यह अपूर्णता ही पूर्ण ईश्वर की सत्ता सिद्ध करती है। पूर्ण सत्ता में किसी भी गुण का अभाव नहीं हो सकता अतः इसमें अस्तित्व का अभाव भी नहीं माना जा सकता इस प्रकार अस्तित्वहीन ईश्वर का विचार अपूर्ण ईश्वर का विचार है तथा ईश्वर कभी अपूर्ण नहीं हो सकता। इस प्रकार डेकार्ट कहते हैं कि ईश्वर का अस्तित्व हमारे विचारों पर निर्भर नहीं है। इस तर्क का प्रारंभ मानव-मस्तिष्क से नहीं, अपितु स्वयं ईश्वर से ही होता है।

डेकार्ट का यह प्रमाण संत अंसेलम की तात्विक युक्ति का ही रूप है जिसके अनुसार पूर्ण ईश्वर की वास्तविक सत्ता होना अनिवार्य है तभी वह पूर्ण हो सकता है।

3. सृष्टिमूलक प्रमाण → डेकार्ट कहते हैं कि ईश्वर ही सृष्टि का कर्ता है। ईश्वर के अतिरिक्त कोई और कर्ता हो ही नहीं सकता। यदि मनुष्य स्वयं अपना कर्ता होता तो स्वयं को इतना सीमित और अपूर्ण नहीं बनाता। दूसरी ओर प्रकृति जड़ है तथा जड़वस्तु केवल उपादान कारण हो सकती है। अतः ईश्वर ही सृष्टि का निमित्त कारण हो सकता है।

4. निगमनात्मक प्रमाण → डेकार्ट निश्चित और स्पष्ट को ही सत्य मानते हैं। इसी आधार पर उन्हें आत्मा की अनुभूति हुई। साथ ही, उन्होंने कहा कि आत्मा के समान ही हमें ईश्वर का भी स्पष्ट अनुभव होता है अतः ईश्वर की सत्ता स्वतः सिद्ध है। डेकार्ट कहते हैं कि मनुष्य के मन में यह स्पष्ट और निश्चित सत्य ईश्वर ही उत्पन्न करता है और मनुष्य चाहे तो भी इसमें परिवर्तन नहीं कर सकता। ईश्वर दयालु है, वह

मनुष्य को धोखा नहीं दे सकता अतः ईश्वर की सत्ता अनिवार्यतः सिद्ध है।